श्रीजगन्नाथजी का प्रत्यक्ष दर्शन श्रीरघुनाथजी के रुप में

गोस्वामी तुलसीदास श्रीरामचन्द्रजी के श्रेष्ठ भक्तों में माने जाते हैं। वृद्धावस्था में एकबार उन्हें पुरी स्थित श्रीजगन्नाथजी के दर्शन करने की इच्छा हुई।

श्रीजगन्नाथजी का दर्शन करने के लिए उन्होंने काशी से श्रीक्षेत्र पुरी तक की पदयात्रा संपन्न की। श्रीजगन्नाथ को धनुषधारी श्रीरघुनाथजी के रूप में दर्शन करने की उनकी मनोकामना थी।

पुरी पहुँचने के उपरान्त, अविलम्ब वे प्रवेश द्वार स्थित २२ सीढ़ियाँ चढ़कर मन्दिर के गर्भगृह में जा पहुँचे। उन्होंने श्रीजगन्नाथजी की प्रतिमा का दर्शन किया। तुलसीदासजी ने श्रीजगन्नाथजी के गोलाकार काले नेत्रों को देखा, एवं हस्तपदादिविहीन श्रीजगन्नाथजी का रूप देखा। परन्तु उन्हें उनके मनोवांच्छित रूप धनुषधारी श्रीरघुनाथजी के दर्शन नहीं हुए। उन्होंने मन में यह विचार कर लिया कि श्रीजगन्नाथजी और श्रीरघुनाथजी एक नहीं हैं, बल्कि अलग हैं।

निराश होकर तुलसीदासजी काशी की ओर तेजी से प्रस्थान करने लगे। उन्होंने निश्चय किया की वे तब तक जल और भोजन ग्रहण नहीं करेंगे जब तक उन्हें उनके इष्ट श्रीरघुनाथजी का दर्शन नहीं हो जाता। दयालु भगवान श्रीजगन्नाथ से भक्त की यह अवस्था देखी नहीं गई, और उन्होंने हनुमानजी को उन्हें काशी जाने से रोकने के लिए भेजा। भगवान के आदेशानुसार हनुमानजी ने अठरनला (अठारह छोटी जल की धाराएँ) स्थित सेतु पर तुलसीदासजी की राह रोकने की चेष्टा की। परन्तु तुलसीदासजी ने उनकी तरफ ध्यान नहीं दिया और काशी की तरफ आगे बढ़ते चले गए।

तृष्णा और क्षुधा से पीड़ित अवस्था में उन्होंने पुरी के निकट अवस्थित मालतीपटपुर नामक एक गाँव के एक तुलसी पूजन के स्थान पर रात बिताने का निश्चय किया। थके होने के कारण उन्हें शीघ्र निद्रा आ गई। स्वप्न में उन्होंने देखा की श्रीमहालक्ष्मी श्रीजगन्नाथजी से कह रही हैं की श्रीक्षेत्र पुरी से कोई भी भक्त बिना महाप्रसाद ग्रहण किए नहीं जाता है परन्तु भक्त तुलसीदास बिना अन्न और जल ग्रहण किए पुरी से चले गए हैं। उन्होंने श्रीजगन्नाथजी से अनुरोध करते हुए कहा की वे स्वयं एक छोटे बालक के रूप में जाकर तुलसीदासजी को महाप्रसाद का सेवन कराकर आएँ। जब उस बालक ने तुलसीदासजी को प्रसाद दिया, तब तुलसीदास जी ने विमुख होकर यह कहा कि उन्हें श्रीजगन्नाथजी का दर्शन श्रीराम के रूप में नहीं हुआ, अतएव वे भोजन ग्रहण नहीं करेंगे।

इस पर उस छोटे बालक ने तुलसीदास को रामचरितमानस की पाण्डुलिपि, जिसको वे अपने साथ लेकर घुमते थे, को खोल कर बालकाण्ड में उनके द्वारा लिखे ११७वें दोहे के चौपाई ५-८ को पढ़ने के लिए कहा। वे चौपाईयाँ इस प्रकार लिखित हैं:

बिनु पद चलई सुनई बिनु काना।
कर बिनु करम करई बिधि नाना।।
आनन रहित सकल रस भोगी।
बिनु बानी बकता बर जोगी।।
तनु बिनु परस नयन बिनु देखा।
ग्रहई घ्राण बिनु बस असेषा।।
असी सब भान्ती अलौकिक करनी।
महिमा जासु जाई नहिन बरनी।।

–अर्थात्, भगवान अथवा परमब्रह्म बिना पद के चलने में सक्षम हैं, बिना कर्ण के श्रवण, बिना हस्त के कर्म करने में, बिना जिह्वा के स्वाद, बिना चर्म के स्पर्श करने में, बिना चक्षु सब कुछ देखने में एवं बिना नाक के घ्राण करने में सक्षम हैं। परमब्रह्म की महिमा इतनी अद्भुत है की उसका वर्णन करना असम्भव है।

सन्त तुलसीदास उस छोटे से बालक के गभीर आध्यात्मिक ज्ञान से चकित हो गए। जीवात्मा कर्म करता है, किन्तु जगन्नाथ देव, जो परमब्रह्म स्वरूप हैं, कोई कर्म नहीं करते हैं, क्योंकि वे सर्वव्यापी, सर्वशक्तिमान और सर्वज्ञ हैं। उन्हें विचरण करने हेतु पद, श्रवण करने हेतु कान एवं कर्म करने के लिए हस्त की आवश्यक्ता नहीं है।

इस घटना के उपरान्त उस बालक के संग तुलसीदास मालतीपटपुर से पुरी मन्दिर में वापस चले आए। जब उन्होंने मन्दिर के गर्भगृह में प्रवेश किया जहाँ श्रीजगन्नाथजी के विग्रह स्थापित हैं, वह छोटा बालक अर्न्तध्यान हो गया, और वे स्वयं भावविभोर होकर समाधिस्त हो गए। जब उनकी चेतना पुन: वापस आई तब श्रीतुलसीदास ने श्रीजगन्नाथ, माता सुभद्रा और श्रीबलभद्र के विग्रह के स्थान पर भगवान श्रीरघुनाथ, माता सीता और लक्ष्मण का दर्शन लाभ किया।

उनके चक्षु से आनन्द के अश्रु झरने लगे और उन्होंने यह अनुभव किया की भगवान श्रीरघुनाथ और श्रीजगन्नाथ एक हैं, उनमें कोई भेद नहीं है। **–मातृचरणाश्रित श्रीसुब्रत पंडा।**